ॐ

संस्कार परम्परा

भारतीय परम्पराओं के अंतर्गत यूं तो अनेक परम्परायें है, किंतु उनमें संस्कार परम्परा, अतिथि देवो भव, गुरु शिष्य परम्परा, पर्व व त्योहारों जैसी परम्परा विशेष उल्लेखनीय हैं। इन्ही के कारण भारतीय संस्कृति देव संस्कृति कहलाई है, जो विश्व की सर्वोत्कृष्ट संस्कृति है। भारतीय संस्कृति में मानव जीवन को सही स्वरुप व दिशा देकर उल्लेखनीय सफलता व सार्थकता प्रदान करने के लिये विभिन्न संस्कारों की सवल, सरल व सफल परिपाटी चिरकाल से चली आ रही है।

संस्कृति का अर्थ है, वह कृति–कार्य पद्वति जो संस्कार सम्पन्न हो। जो व्यक्ति के उत्छृंखल मनोवृति पर नियंत्रण स्थापित कर उसे संस्कारी बनाये, ताकि वह परिवार समाज व देश के लिये उपयोगी सिद्व हो सके, यही संस्कार है।

प्रसिद्व मीमांसक कुमारिल भट्ट तंत्र वार्तिक में कहा गया है " **योग्यतां चादधानाः क्रियाः संस्कारा इव्युच्यन्ते** "

अर्थात् संस्कार वे क्रियायें व रीतियां है, जो योग्यता प्रदान करती हैं। आज मानव समाज में सौलह संस्कार प्रमुख माने गये हैं। महर्षि व्यास ने लिखा है :–

गर्भाधानं पुसवनं सीमन्तो जातकर्म च। नाम क्रिया निष्क्रमोडन्न–प्राशनं वप्रनक्रिया ।।
कर्णवेधो व्रत–देशो वेदारभक्रिया विधिः। केशान्तः स्नानमुद्वाहो विवाहाग्नि परिग्रहः ।।
त्रेलाग्नि संग्रह शैव संस्कारः षोडश स्मृतः।

इस तरह परम्परागत रुप में सौलह संस्कारों का उल्लेख मिलता है। जिस तरह आयुर्वेदिक रसायन बनाने की विधि में औषधियों में कितने ही संस्कार डाले जाते हैं। कई बार उन्हें खरल करके जलाया, तपाया जाता है, तब जाकर कहीं शीशा, पारा, लोहा, चांदी व अभ्रक जैसे अशुद्व खनिज चमत्कारी शक्ति सम्पन्न बन जाते हैं।

ठीक इसी तरह मनुष्य पर भी समय–समय पर विभिन्न आध्यात्मिक उपचारों द्वारा सुसंस्कृत बनाने की महत्वपूर्ण प्रक्रिया हमारे ऋषियों ने विकसित की थी। वैसे तो किसी व्यक्ति को सुसंस्कृत बनाने के लिये शिक्षा, सत्संग, वातावरण, परिस्थितियों व सूझवूझ जैसी अनेक बातें महत्वपूर्ण होती है तथापि बालक की अन्तः मनोभूमि को श्रेष्ठता व सही दिशा देने के लिये ऐसे सूक्ष्म उपचारों का अविष्कार हमारे पूर्वजों ने किया, जिनका प्रभाव शरीर व मन पर ही नहीं सूक्ष्म अंतःकरण पर भी पड़ता है और उसके प्रभाव से मनुष्य गुण–कर्म व स्वभाव की दृष्टि से समुन्नत स्तर की ओर तेजी से अग्रसर होता है। इसी आध्यात्मिक उपचार का नाम संस्कार है। इसी परम्परा के रहते प्राचीनकाल में प्रत्येक भारतीय एक जीता–जागता रसायन होता था। मनुष्य शरीर में रहते हुये भी वे आत्मा से देवस्तर के होते थे। उनके निवास से भारत की यह भूमि पुण्य भूमि " स्वर्गादपि गरीयसी " कही जाती थी। " वसुधैव कुटुम्बकम " का उद्घोष भी ऐसी ही महान आत्माओं की देन रही है। भारत को यह गौरव संस्कारवान श्रेष्ठ मानवों के द्वारा ही प्राप्त हुआ।

भारतीय संस्कृति में ढले हुये नर–रत्नों ने अपने दिव्य प्रकाश से वह इतिहास रचा जो आज भी चाव से पढ़े जाते हैं। जहां छत्रपति शिवाजी को उनकी माता ने वीरता के गुण दिये। वह बालक ध्रुव माँ की प्रेरणा से अमरत्व को प्राप्त हुआ। अपने इसी आकर्षण के कारण भारत विश्व में ज्ञान के क्षेत्र में जगत् गुरु, अर्थ के क्षेत्र में सोने की चिड़िया व शक्ति क्षेत्र में चक्रवर्ती कहलाया। हमारे अतीत का इतिहास इस तथ्य का मुक्त कंठ से उद्घोष कर रहा है।

भारत की इसी संस्कृति ने गुरु–शिष्य परम्परा की नींव डाली, जहां गुरु अपने शिष्य के अंतरंग में उठने वाले मनोभावों को पढ़कर एक कुशल माली की तरह बुराईयों को उखाड़ फेंकता था व श्रेष्ठताओं को खाद, पानी व हवा देकर अपने संरक्षण में फलने–फूलने का मौका देता। तब शिष्य जिंदगी के संग्राम में उतरते हुये इतना मजबूत होता था कि, असफलता, निराशा, चिंता व उद्विग्नता जैसे अवगुण पास आने का साहस की नहीं कर पाते थे।

संस्कार पद्वति के अंतर्गत वेदमंत्रों के सस्वर उच्चारण से ध्वनि, तरंगे व यज्ञीय ऊष्मा मिलकर एक ऐसा वातावरण प्रस्तुत करती हैं, जिससे व्यक्तियों के गुण–कर्म व स्वभाव में अनेक विशेषतायें प्रस्फुटित होती हैं। ये विशेषतायें ही व्यक्तित्व विकास के साथ समाज व देश को तेजी से प्रगति की ओर ले जाने में सहायक होती हैं। विभिन्न संस्कारों को करते समय जो छोटी–छोटी विधियां व कर्मकांड सम्पन्न किये जाते हैं, उनकी छाप जीवन भर नहीं मिटती। इस परम्परा के अंतर्गत जन्म से पूर्व व मृत्यु के पश्चात् तक मानवी चेतना को संस्कारित करने का क्रम निर्धारित है। सदा से भारतीय संस्कृति महापुरुषों को जन्म देती आई है। यही हमारी सबसे बड़ी धरोहर भी है।

लेकिन आज हम अपनी इस बहुमूल्यवान परम्पराओं को भूल बैठे है। मृगतृष्णा की भांति हम पाश्चात्य संस्कृति की ओर अंधाधुन्ध दौड़ लगा रहे हैं, जिसके दुष्परिणाम से कोई भी अछूता नहीं है। अनास्था हताशा, निराशा, नैतिक पतन, चिंता, उदिग्नता आदि अनेक बुराईयां संस्कार परम्पराओं के लोप के कारण ही जन्मी हैं। आज जितनी आत्म हत्याएं हो रही हैं, पहले कभी नहीं हुई। कारण आज हम बाहर से तो शान–शौकत अपनाते हैं किंतु अंदर से उतने ही खोखले होते हैं। हाल ही में चार्ली चेपलिन की मौत, बॉम्बे में माडल द्वारा आत्महत्या इसी ओर संकेत करती हैं। यदि हम अपनों को, अपने नौनिहालों को इस बुराई से बचाना चाहते हैं, तो हमें पीछे लौटना ही होगा। उन परम्पराओं की श्रेष्ठता को स्वीकार करते हुये अपनाना होगा, ताकि प्रारंभ से ही बालक की मनोभूमि इतनी मजबूत बने कि, जीवन की प्रतिकूल धारायें उसे छू भी न सकें व वह मुस्कुराते हुये जीवन रथ को बढ़ाता रहे। यदि हम ऐसा कर सके तो आने वाली पीढ़ी पर बड़ा उपकार होगा साथ ही देश का भविष्य हमारे नौनिहालों के हाथ सदा सुरक्षित रहेगा। आइये हम संकल्प लें –

" शक्ति हो तो ताल ठोको, क्रूर युग की राह रोको ताकि शुभ संकल्प की जय हो, विजय हो। "

डॉ. श्रीमति कुसुम गुप्ता,
21, गायत्री नगर, ग्वालियर

♦♦♦♦♦♦♦